eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 10, October 2026 DOI- https://doi.org/10.5281/zenodo.24217769

# पंडित दीनदयाल उपाध्याय और मानवेंद्र नाथ रॉय के विचारों में व्यक्ति और समाज की अवधारणा : एक तुलनात्मक विश्लेषण

**कमलेश्वर[1] एवं प्रो. मधुरेन्द्र कुमार[2]**
[1]शोधार्थी राजनीति विज्ञान विभाग, डी.एस.बी. परिसर कुमाऊँ विश्वविद्यालय, (नैनीताल)
[2]शोध निर्देशक राजनीति विज्ञान विभाग, डी.एस.बी. परिसर कुमाऊँ विश्वविद्यालय, (नैनीताल)

Received: 31 July 2026 Accepted & Reviewed: 25 Oct 2026, Published: 31 October 2026

## Abstract

व्यक्ति और समाज के बीच संबंध आधुनिक राजनीतिक और दार्शनिक विमर्श में केंद्रीय स्थान रखता है। बीसवीं सदी की भारतीय बौद्धिक परंपरा में, दो प्रमुख विचारक – दीनदयाल उपाध्याय और एम. एन. रॉय – ने इस संबंध पर भिन्न लेकिन महत्वपूर्ण दृष्टिकोण प्रस्तुत किए। उपाध्याय का एकात्म मानववाद समाज की एक जैविक और सांस्कृतिक रूप से जड़ वाली अवधारणा प्रस्तुत करता है जिसमें व्यक्ति एक नैतिक और आध्यात्मिक सामाजिक व्यवस्था के भीतर सामंजस्यपूर्ण ढंग से एकीकृत होता है। इसके विपरीत, एम. एन. रॉय का एकात्म मानववाद (नव मानववाद) एक स्वतंत्र और लोकतांत्रिक समाज की नींव के रूप में व्यक्ति की स्वायत्तता, तर्कसंगतता और नैतिक संप्रभुता पर जोर देता है। यह शोध पत्र व्यक्ति की प्रकृति, समाज की संरचना और उद्देश्य, राज्य की भूमिका, स्वतंत्रता, नैतिकता और सामाजिक परिवर्तन पर उनके विचारों का तुलनात्मक विश्लेषण करता है। यह तर्क देता है कि जहाँ दोनों विचारकों ने एक न्यायपूर्ण और मानवीय सामाजिक व्यवस्था बनाने की मांग की, वहीं उनके दार्शनिक आधारों में मौलिक अंतर था – उपाध्याय सांस्कृतिक–आध्यात्मिक जीववाद की ओर झुके हुए थे और रॉय तर्कसंगत व्यक्तिवाद की ओर।

**मुख्य शब्दः** व्यक्ति, समाज, एकात्म मानववाद, एकात्म मानववाद, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, तर्कवाद

## Introduction

व्यक्ति और समाज के बीच का संबंध विभिन्न सभ्यताओं में राजनीतिक दर्शन की केंद्रीय चिंताओं में से एक रहा है। आधुनिक भारत में, बीसवीं शताब्दी के दौरान इस प्रश्न ने विशेष तात्कालिकता प्राप्त की, जब देश राजनीतिक जागरण, उपनिवेश–विरोधी संघर्ष और स्वतंत्रता के बाद के पुनर्निर्माण से गुजर रहा था। विचारकों ने न केवल राजनीतिक स्वतंत्रता सुरक्षित करने की मांग की, बल्कि राष्ट्रीय जीवन की नैतिक और सामाजिक नींव को भी फिर से परिभाषित करने का प्रयास किया। इस विमर्श में प्रमुख योगदानकर्ताओं में दीनदयाल उपाध्याय और मानवेंद्र नाथ रॉय शामिल थे, जिनके विचार भारतीय राजनीतिक विचार की दो विशिष्ट लेकिन प्रभावशाली धाराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

दीनदयाल उपाध्याय, जिन्होंने समग्र मानववाद का समर्थन किया, ने 1960 के दशक के मध्य में अपनी विचारधारा को व्यक्त किया, जो पश्चिमी राजनीतिक विचारधाराओं जैसे उदारवाद, पूंजीवाद और समाजवाद की अपर्याप्तताओं की उनकी कथित धारणाओं की प्रतिक्रिया थी। उन्होंने तर्क दिया कि ये प्रणालियाँ मानव स्वभाव की आंशिक समझ पर आधारित थीं और भारत की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक परंपराओं के अनुकूल एक समग्र ढांचा प्रदान करने में विफल रहीं। उपाध्याय के लिए, व्यक्ति को समाज से अलग करके नहीं समझा जा सकताय बल्कि, व्यक्ति एक बड़े सामाजिक जीव का एक अभिन्न अंग है जो सांस्कृतिक निरंतरता और नैतिक व्यवस्था में निहित है। सद्भाव, कर्तव्य और धर्म पर उनका जोर समाज

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 10, October 2026 DOI- https://doi.org/10.5281/zenodo.24217769

को एक जीवित इकाई के रूप में रखता है जो व्यक्तिगत विकास का पोषण करती है और उसे आकार देती है।[1]

मानवेंद्र नाथ रॉय की बौद्धिक यात्रा क्रांतिकारी मार्क्सवादी से रेडिकल ह्यूमनिज्म के संस्थापक तक स्वतंत्रता, तर्कसंगतता और नैतिक स्वायत्तता के सवालों के साथ गहरे जुड़ाव को दर्शाती है। कम्युनिस्ट शासनों में सत्तावादी प्रवृत्तियों से मोहभंग होने के बाद, रॉय ने व्यक्ति की संप्रभुता पर केंद्रित एक दर्शन विकसित किया। उनके लिए, तर्क और आलोचनात्मक पूछताछ मानवता के परिभाषित गुण थे। इसलिए, समाज को व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करने और तर्कसंगत सहयोग को बढ़ावा देने के लिए संगठित किया जाना चाहिए। उपाध्याय की समाज की जैविक अवधारणा के विपरीत, रॉय ने सामाजिक संगठन को एक लोकतांत्रिक और स्वैच्छिक संघ के रूप में देखा, जिसे मानव स्वतंत्रता और रचनात्मकता को बढ़ाने के लिए डिजाइन किया गया था।

इन दो विचारकों का तुलनात्मक अध्ययन महत्वपूर्ण है क्योंकि यह भारतीय राजनीतिक विचार के भीतर एक व्यापक वैचारिक बहस को उजागर करता है सांप्रदायिक–सांस्कृतिक ढांचे और तर्कसंगत–व्यक्तिवादी दृष्टिकोणों के बीच तनाव। जहाँ उपाध्याय सामाजिक सद्भाव और सामूहिक पहचान की प्रधानता पर जोर देते हैं, वहीं रॉय व्यक्तिगत स्वायत्तता और लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को प्राथमिकता देते हैं। हालाँकि, दोनों ही शोषण और नैतिक पतन से मुक्त एक न्यायपूर्ण और मानवीय सामाजिक व्यवस्था के निर्माण के प्रति प्रतिबद्धता साझा करते हैं। उनके मतभेद मुख्य रूप से दार्शनिक नींवों में निहित हैं उपाध्याय के मामले में आध्यात्मिक–सांस्कृतिक और रॉय के मामले में धर्मनिरपेक्ष–तर्कसंगत और कर्तव्यों और अधिकारों को वे जो सापेक्ष महत्व देते हैं।

इस अध्ययन का उद्देश्य व्यक्ति और समाज की उनकी संबंधित अवधारणाओं का विश्लेषण करना, अभिसरणों और विचलन की पहचान करना और समकालीन सामाजिक–राजनीतिक संदर्भों में उनकी प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना है। आधुनिक भारत की ऐतिहासिक और बौद्धिक जलवायु में उनके विचारों को स्थापित करके, यह शोध यह प्रदर्शित करने का प्रयास करता है कि समग्र मानववाद और रेडिकल ह्यूमनिज्म के बीच संवाद लोकतंत्र, राष्ट्रवाद, धर्मनिरपेक्षता और मानव विकास पर बहसों को सूचित करता रहता है। अंततः, उनके दृष्टिकोणों की जांच से हमें यह समझने में मदद मिलती है कि भारतीय राजनीतिक विचार ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक जिम्मेदारी के बीच संतुलन की स्थायी चुनौती से कैसे निपटा है।[2]

## ➢ दार्शनिक आधार

---

[1] अप्पादोरई, ए. (1971). बीसवीं सदी में भारतीय राजनीतिक सोच, नौरोजी से नेहरू तक एक शुरुआती सर्वे, पृष्ठ संख्या 90 .

[2] चक्रवर्ती, बी., और पांडे, आर. के. (2023). मॉडर्न भारतीय राजनीतिक विचाररू टेक्स्ट और संदर्भ। रूटलेज इंडिया, पृष्ठ संख्या 12 .

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 10, October 2026 DOI- https://doi.org/10.5281/zenodo.24217769

- **दीनदयाल उपाध्यायः एकात्म मानववाद**

उपाध्याय का दर्शन इस विचार पर आधारित है कि मनुष्य शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा से बनी अविभाज्य इकाइयाँ हैं। उनके विचार में, समाज एक संविदात्मक व्यवस्था नहीं बल्कि एक जैविक इकाई (चिति) है जिसका अपना सांस्कृतिक व्यक्तित्व है। व्यक्ति इस बड़ी सामाजिक जीव का एक अविभाज्य अंग है।

उन्होंने अत्यधिक व्यक्तिवाद और सामूहिक राज्यवाद दोनों को अस्वीकार कर दिया। उनके अनुसार, पश्चिमी व्यक्तिवाद व्यक्ति को समाज से अलग करता है, जबकि समाजवाद व्यक्ति को राज्य के अधीन करता है। एकात्म मानववाद भारतीय सभ्यता में निहित धर्म (नैतिक कर्तव्य) और सांस्कृतिक मूल्यों के माध्यम से व्यक्ति और समाज के बीच सामंजस्य स्थापित करता है।

उपाध्याय के लिए, समाज नैतिक अर्थ में व्यक्ति से पहले आता है। व्यक्ति केवल समाज के सांस्कृतिक और नैतिक ढांचे के भीतर ही फलता–फूलता है। इसलिए, स्वतंत्रता पूर्ण स्वायत्तता नहीं, बल्कि सामाजिक जिम्मेदारी द्वारा निर्देशित अनुशासित स्वतंत्रता है।[3]

- **एम. एन. रॉयः एकात्म मानववाद**

एम. एन. रॉय का एकात्म मानववाद रूढ़िवादी मार्क्सवाद से मोहभंग के बाद उभरा। उन्होंने तर्क को मनुष्यों की परिभाषित विशेषता के रूप में महत्व दिया। रॉय के लिए, व्यक्ति परम नैतिक और राजनीतिक इकाई है। समाज व्यक्तिगत क्षमता के पूर्ण विकास को सुविधाजनक बनाने के लिए मौजूद है।

रॉय ने सामाजिक संगठन के आध्यात्मिक और आध्यात्मिक आधारों को अस्वीकार कर दिया। इसके बजाय, उन्होंने नैतिक मानववाद पर आधारित एक धर्मनिरपेक्ष, तर्कसंगत और लोकतांत्रिक समाज का प्रस्ताव रखा। उनके विचार में स्वतंत्रता सर्वोच्च मूल्य है – विचार, अभिव्यक्ति और कार्य की स्वतंत्रता।

उपाध्याय के समाज के जैविक दृष्टिकोण के विपरीत, रॉय ने समाज को पारस्परिक प्रगति सुनिश्चित करने के लिए गठित एक सहकारी व्यवस्था माना। व्यक्ति समाज के अधीन नहीं है बल्कि, समाज व्यक्ति की सहमति और भागीदारी से वैधता प्राप्त करता है।

- **व्यक्ति की अवधारणा**

उपाध्याय व्यक्ति को परंपरा और समुदाय में निहित एक नैतिक–आध्यात्मिक प्राणी के रूप में देखते हैं। व्यक्ति की पहचान परिवार, संस्कृति और राष्ट्र द्वारा आकार लेती है। आत्म–साक्षात्कार सामूहिक जीवन में भागीदारी के माध्यम से होता है। अधिकार से अधिक कर्तव्यों को प्राथमिकता दी जाती है।

[3] फुच्स, सी. (2019). एमएन रॉय और फ्रैंकफर्ट स्कूलः सोशलिस्ट ह्यूमनिज्म और कम्युनिकेशन, कल्चर, टेक्नोलॉजी, फासीवाद और राष्ट्रवाद का क्रिटिकल एनालिसिस। ट्रिपलसीरू कम्युनिकेशन, कैपिटलिज्म और क्रिटिक। ओपन एक्सेस जर्नल फॉर ए ग्लोबल सस्टेनेबल इन्फॉर्मेशन सोसाइटी, 17(2), पृष्ठ संख्या 249 .

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 10, October 2026 DOI- https://doi.org/10.5281/zenodo.24217769

दूसरी ओर, रॉय व्यक्तिगत स्वायत्तता और तर्कसंगत क्षमता पर जोर देते हैं। व्यक्ति की पहचान परंपरा से नहीं, बल्कि आलोचनात्मक रूप से सोचने और नैतिक रूप से कार्य करने की क्षमता से होती है। अधिकार और स्वतंत्रता मौलिक हैं और उन्हें सामूहिक पहचान के अधीन नहीं किया जा सकता है।

इस प्रकार, उपाध्याय का व्यक्ति सामाजिक रूप से एकीकृत और कर्तव्य–बद्ध है, जबकि रॉय का व्यक्ति तर्कसंगत रूप से स्वायत्त और अधिकार–उन्मुख है।[4]

- **समाज की अवधारणा**

एकात्म मानववाद में, समाज एक सामूहिक चेतना (चिति) वाला एक जीवित जीव है। इसमें एक आंतरिक एकता है जो संविदात्मक संबंधों से परे है। सामाजिक सामंजस्य धर्म के पालन और कार्यात्मक विविधता (संघर्ष नहीं) की मान्यता के माध्यम से प्राप्त किया जाता है।

रॉय समाज को स्वतंत्र व्यक्तियों के स्वैच्छिक संघ के रूप में अवधारणा करते हैं। वह समाज को एक रहस्यमय जीव के रूप में विचार को अस्वीकार करते हैं। उनके लिए, समाज को तर्कसंगत सहयोग और लोकतांत्रिक भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए संरचित किया जाना चाहिए। सत्तावाद को रोकने के लिए विकेंद्रीकरण और जमीनी लोकतंत्र आवश्यक हैं।

जबकि उपाध्याय एकता और सांस्कृतिक निरंतरता पर जोर देते हैं, रॉय बहुलता और तर्कसंगत पुनर्निर्माण पर जोर देते हैं।

- **राज्य की भूमिका**

उपाध्याय एक सीमित लेकिन सांस्कृतिक रूप से जड़ वाले राज्य की वकालत करते हैं जो राष्ट्रीय पहचान की रक्षा करता है और संतुलित विकास सुनिश्चित करता है। राज्य को समाज पर हावी नहीं होना चाहिए बल्कि धर्म के साधन के रूप में कार्य करना चाहिए।

रॉय केंद्रीकृत शक्ति से सावधान रहते हैं। उनके मॉडल में विकेन्द्रीकृत स्थानीय परिषदों पर आधारित 'संगठित लोकतंत्र' का प्रस्ताव है। राज्य को नागरिक स्वतंत्रता की गारंटी देनी चाहिए और जबरन नियंत्रण के बिना व्यक्तिगत विकास को सक्षम करना चाहिए।

दोनों विचारक अधिनायकवाद की आलोचना करते हैं लेकिन उनके आधार में भिन्न हैं – उपाध्याय सांस्कृतिक–नैतिक दृष्टिकोण से और रॉय तर्कसंगत–स्वतंत्रतावादी दृष्टिकोण से।

- **स्वतंत्रता और जिम्मेदारी**

उपाध्याय स्वतंत्रता को नैतिक अनुशासन के भीतर सार्थक मानते हैं। सामाजिक जिम्मेदारी के बिना अत्यधिक व्यक्तिगत स्वतंत्रता अराजकता की ओर ले जाती है। इसलिए, स्वतंत्रता को सामाजिक कर्तव्यों के साथ संरेखित होना चाहिए।

[4] दीनदयाल उपाध्याय. (2014). पॉलिटिकल डायरी. नई दिल्लीः सुरुचि प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 77.

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 10, October 2026 DOI- https://doi.org/10.5281/zenodo.24217769

रॉय स्वतंत्रता को मानवीय गरिमा का अंतर्निहित मानते हैं। नैतिक जिम्मेदारी धार्मिक या सांस्कृतिक दायित्वों के बजाय तर्कसंगत समझ से उत्पन्न होती है। स्वतंत्रता सामाजिक संगठन का एक साधन और लक्ष्य दोनों है।[5]

- **सामाजिक परिवर्तन और प्रगति**

उपाध्याय स्वदेशी मूल्यों में निहित क्रमिक सुधार का समर्थन करते हैं। उनका मानना है कि सामाजिक परिवर्तन को सांस्कृतिक निरंतरता का सम्मान करना चाहिए।

रॉय तर्कसंगत जांच के माध्यम से महत्वपूर्ण परिवर्तन की वकालत करते हैं। वह समाज के पुनर्निर्माण के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण, शिक्षा और लोकतांत्रिक सक्रियता का समर्थन करते हैं।

## ➢ समानता के बिंदु

1. दोनों पश्चिमी भौतिकवाद के चरम रूपों को अस्वीकार करते हैं।
2. दोनों एक मानवीय और नैतिक सामाजिक व्यवस्था चाहते हैं।
3. दोनों अधिनायकवाद और केंद्रीकृत सत्तावादी नियंत्रण का विरोध करते हैं।
4. दोनों राजनीति के नैतिक आयामों पर जोर देते हैं।

## ➢ मतभेद के बिंदु

| आयाम | एकात्म मानववाद | कट्टरपंथी मानवतावाद |
|---|---|---|
| दार्शनिक | आध्यात्मिक–सांस्कृतिक | तर्कसंगत–धर्मनिरपेक्ष |
| व्यक्ति | कर्तव्य–केंद्रित | अधिकार–केंद्रित |
| समाज | जैविक एकता | स्वैच्छिक संघ |
| राज्य | सांस्कृतिक संरक्षण | लोकतांत्रिक सुविधाकर्ता |
| आजादी | शर्तों पर आधारित आजादी | लोकतांत्रिक सूत्रधार |
| आयाम | एकात्म मानववाद | कट्टरपंथी मानवतावाद |

## ➢ आलोचनात्मक मूल्यांकन

दीनदयाल उपाध्याय और मानवेंद्र नाथ रॉय के विचारों में व्यक्ति और समाज की अवधारणा का एक आलोचनात्मक मूल्यांकन व्यक्ति और सामाजिक व्यवस्था के बीच संबंधों को समझने के दो अलग–अलग लेकिन दार्शनिक रूप से महत्वपूर्ण दृष्टिकोणों को प्रकट करता है। उपाध्याय का दर्शन, जिसे एकात्म मानववाद के नाम से जाना जाता है, व्यक्ति, समाज और राज्य के बीच एक सामंजस्यपूर्ण और जैविक संबंध

[5] मनबेंद्र नाथ रॉय. (1947). न्यू ह्यूमनिज्मः एक मैनिफेस्टो. कलकत्ताः रेनेसां पब्लिशर्स, पृष्ठ संख्या 31 .

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 10, October 2026 DOI- https://doi.org/10.5281/zenodo.24217769

पर जोर देता है। उनके अनुसार, व्यक्ति कोई अलग इकाई नहीं है, बल्कि एक बड़े सामाजिक और सांस्कृतिक जीव का एक अभिन्न अंग है। उनका मानना था कि समाज एक जीवित शरीर की तरह काम करता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति पूरे के कल्याण के लिए एक विशिष्ट भूमिका निभाता है। उनके विचार में, मानव जीवन को एक समग्र तरीके से समझा जाना चाहिए जो शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक आयामों को एकीकृत करता है। इसलिए, व्यक्ति का विकास समाज के सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों से अलग नहीं किया जा सकता है। उपाध्याय ने पश्चिमी विचारधाराओं जैसे चरम व्यक्तिवाद और भौतिकवादी समाजवाद की आलोचना की क्योंकि उन्होंने मनुष्यों की आध्यात्मिक प्रकृति को नजरअंदाज कर दिया। उनका दृष्टिकोण सामाजिक सद्भाव, नैतिक कर्तव्य और सांस्कृतिक पहचान को महत्व देता है, लेकिन आलोचकों का तर्क है कि यह कभी–कभी सामूहिक परंपराओं और सामाजिक एकजुटता पर अत्यधिक जोर दे सकता है, जो व्यक्तिगत स्वायत्तता और आलोचनात्मक असहमति को सीमित कर सकता है।[6]

दूसरी ओर, रॉय का दर्शन, विशेष रूप से उनका अतिवादी मानववाद (नव–मानववाद के रूप में भी जाना जाता है) सिद्धांत, व्यक्ति को सामाजिक और राजनीतिक जीवन के केंद्र में रखता है। रॉय का मानना था कि मानव स्वतंत्रता, तर्कसंगतता और बौद्धिक स्वतंत्रता एक प्रगतिशील समाज के मौलिक आधार हैं। समाज के उपाध्याय के जैविक दृष्टिकोण के विपरीत, रॉय ने इस बात पर जोर दिया कि समाज अनिवार्य रूप से स्वतंत्र व्यक्तियों का एक स्वैच्छिक संघ है जो आपसी लाभ के लिए सहयोग करते हैं। उन्होंने सत्तावाद, हठधर्मी परंपराओं और किसी भी प्रकार की सामाजिक संरचना का कड़ा विरोध किया जो मानवीय स्वतंत्रता को प्रतिबंधित करती है। रॉय का तर्क था कि सच्चा सामाजिक प्रगति तभी प्राप्त की जा सकती है जब व्यक्तियों को तर्कसंगत रूप से सोचने, सत्ता पर सवाल उठाने और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए सशक्त बनाया जाए। उनके मानवतावादी दर्शन सामाजिक विकास की नींव के रूप में वैज्ञानिक दृष्टिकोण, धर्मनिरपेक्ष नैतिकता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर जोर देते हैं। हालाँकि, रॉय के विचारों के आलोचक बताते हैं कि तर्कसंगत व्यक्तिवाद पर उनका मजबूत जोर सांस्कृतिक परंपराओं, भावनात्मक बंधनों और सामुदायिक मूल्यों के महत्व को कम आंक सकता है जो मानव जीवन को भी आकार देते हैं।[7]

तुलनात्मक दृष्टिकोण से, दोनों विचारकों का उद्देश्य एक संतुलित और नैतिक सामाजिक व्यवस्था बनाना था, लेकिन उन्होंने विभिन्न दार्शनिक अभिविन्यासों से व्यक्ति और समाज के बीच संबंधों को अपनाया। उपाध्याय की दृष्टि सामाजिक सद्भाव, सांस्कृतिक निरंतरता और नैतिक जिम्मेदारी पर केंद्रित है, जबकि रॉय के दर्शन में व्यक्तिगत स्वतंत्रता, तर्कसंगत पूछताछ और लोकतांत्रिक भागीदारी को प्राथमिकता दी गई है। उपाध्याय समाज को एक जैविक और सांस्कृतिक रूप से जड़ वाली इकाई के रूप में देखते हैं जो व्यक्तिगत पहचान को आकार देती है, जबकि रॉय समाज को व्यक्तियों के एक तर्कसंगत और विकसित संघ के रूप में मानते हैं। इन मतभेदों के बावजूद, दोनों विचारकों में मानवीय गरिमा और समाज के कल्याण

[6] एंडरसन, डब्ल्यू. के. (1975). जनसंघः पार्टी के व्यवहार में विचारधारा और संगठन (डॉक्टरल शोध प्रबंध, द यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो), पृष्ठ संख्या 70 .

[7] चटर्जी, पी. (2020). देश और उसके टुकड़ेः कॉलोनियल और पोस्ट–कॉलोनियल इतिहास, पृष्ठ संख्या 10 .

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 10, October 2026 DOI- https://doi.org/10.5281/zenodo.24217769

के लिए एक समान चिंता है। एक आलोचनात्मक मूल्यांकन से पता चलता है कि उनके विचारों को पूरी तरह से विरोधाभासी होने के बजाय पूरक के रूप में देखा जा सकता हैरू नैतिक और सांस्कृतिक एकीकरण पर उपाध्याय का जोर सामाजिक जीवन के लिए नैतिक आधार प्रदान कर सकता है, जबकि स्वतंत्रता और तर्कसंगतता पर रॉय का जोर व्यक्तिगत अधिकारों और बौद्धिक प्रगति की सुरक्षा सुनिश्चित करता है। इसलिए, उनके दृष्टिकोणों का संश्लेषण समकालीन राजनीतिक और सामाजिक विचार में व्यक्ति और समाज के बीच संबंधों की अधिक संतुलित समझ में योगदान कर सकता है।[8]

## निष्कर्ष

दीनदयाल उपाध्याय और मानवेंद्र नाथ रॉय के विचारों में व्यक्ति और समाज की अवधारणा का तुलनात्मक अध्ययन दो महत्वपूर्ण दार्शनिक दृष्टिकोणों को उजागर करता है जो मानव प्राणियों और सामाजिक व्यवस्था के बीच के संबंध को समझाने का प्रयास करते हैं। दोनों विचारक एक न्यायसंगत, सामंजस्यपूर्ण और प्रगतिशील समाज के निर्माण की समस्या से गहराई से चिंतित थे, लेकिन उन्होंने इस लक्ष्य को विभिन्न बौद्धिक परंपराओं और वैचारिक ढांचों के माध्यम से प्राप्त किया। उपाध्याय ने अपने समग्र मानववाद के दर्शन के माध्यम से, व्यक्ति और समाज के बीच जैविक एकता पर जोर दिया। उनके अनुसार, व्यक्ति समाज के बिना स्वतंत्र रूप से मौजूद नहीं रह सकता, क्योंकि सामाजिक जीवन मानव विकास के लिए आवश्यक सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक ढाँचा प्रदान करता है। उनका मानना था कि समाज एक जीवित जीव की तरह कार्य करता है जिसमें व्यक्ति आपस में जुड़े हुए और एक–दूसरे पर निर्भर होते हैं। इसलिए, समाज का कल्याण और व्यक्तियों का विकास संतुलित और सामंजस्यपूर्ण तरीके से एक साथ प्रगति करना चाहिए। उपाध्याय ने सामाजिक जीवन को आकार देने में सांस्कृतिक विरासत, नैतिक मूल्यों और आध्यात्मिक चेतना के महत्व पर भी जोर दिया। उनका दर्शन व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सामाजिक जिम्मेदारी और सांस्कृतिक पहचान के साथ एकीकृत करने वाली एक संतुलित प्रणाली बनाने का प्रयास करता है।

दूसरी ओर, रॉय के दर्शन, विशेष रूप से उनके कट्टर मानववाद (जिसे नव–मानववाद के रूप में भी जाना जाता है) के सिद्धांत, व्यक्ति की स्वायत्तता और तर्कसंगतता पर अधिक जोर देते हैं। रॉय का मानना था कि मनुष्य मूल रूप से तर्कसंगत और रचनात्मक व्यक्ति हैं जो अपने भाग्य को आकार देने में सक्षम हैं। उनके विचार में, समाज कोई जैविक इकाई नहीं है जो व्यक्ति को निर्धारित करती है, बल्कि मुक्त व्यक्तियों द्वारा बनाया गया एक स्वैच्छिक संघ है जो आपसी लाभ और प्रगति के लिए सहयोग करते हैं। रॉय ने व्यक्ति और समाज दोनों के विकास के लिए बौद्धिक स्वतंत्रता, लोकतांत्रिक भागीदारी और वैज्ञानिक सोच को आवश्यक शर्ते के रूप में दृढ़ता से वकालत की। उन्होंने पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं, हठधर्मी विश्वासों और सत्तावादी राजनीतिक प्रणालियों की आलोचना की जो मानव स्वतंत्रता और तर्कसंगत जांच को दबाते हैं। रॉय के लिए, समाज की प्रगति महत्वपूर्ण सोच और जिम्मेदार कार्रवाई में सक्षम व्यक्तियों के सशक्तिकरण पर निर्भर करती है।

हालांकि उपाध्याय और रॉय के दार्शनिक दृष्टिकोणों पर उनके जोर में भिन्नता है, दोनों विचारक अंततः मानव कल्याण और सामाजिक सामंजस्य को बढ़ावा देना चाहते हैं। उपाध्याय का दर्शन सांस्कृतिक मूल्यों,

[8] दीनदयाल उपाध्याय. (1965). इंटीग्रल ह्यूमनिज्म. नई दिल्लीः भारतीय जनसंघ, पृष्ठ संख्या 54 .

eISSN 3139-2377
RESEARCH WORK
A Monthly, Open Access, Peer Reviewed International Research Journal
Volume 02, Issue 10, October 2026 DOI- https://doi.org/10.5281/zenodo.24217769

नैतिक जिम्मेदारी और सामाजिक एकीकरण के महत्व को उजागर करता है, जबकि रॉय का मानववाद व्यक्तिगत स्वतंत्रता, तर्कसंगत विचार और लोकतांत्रिक आदर्शों के महत्व को रेखांकित करता है। उनके दृष्टिकोण मानव अस्तित्व के दो पूरक आयामों को दर्शाते हैंरू सामाजिक जुड़ाव और सांस्कृतिक निरंतरता की आवश्यकता, और बौद्धिक स्वतंत्रता और व्यक्तिगत स्वायत्तता की आवश्यकता। उनके विचारों की एक तुलनात्मक समझ बताती है कि एक संतुलित सामाजिक व्यवस्था को इन दोनों पहलुओं को पहचानना चाहिए। अति–सामूहिकतावाद पर अत्यधिक जोर व्यक्तिगत रचनात्मकता और स्वतंत्रता को प्रतिबंधित कर सकता है, जबकि अत्यधिक व्यक्तिवाद सामाजिक सामंजस्य और नैतिक जिम्मेदारी को कमजोर कर सकता है।

इसलिए, दीनदयाल उपाध्याय और मानवेंद्र नाथ रॉय दोनों के विचार समकालीन राजनीतिक दर्शन और सामाजिक विकास की चर्चाओं में प्रासंगिक बने हुए हैं। उनके विचार व्यक्तियों और समाज के बीच जटिल संबंध में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं और नैतिक मूल्यों को तर्कसंगत स्वतंत्रता के साथ संयोजित करने वाले संश्लेषण को प्रोत्साहित करते हैं। ऐसा संतुलित दृष्टिकोण एक मानवीय और लोकतांत्रिक सामाजिक व्यवस्था के विकास में योगदान कर सकता है जिसमें व्यक्ति अपनी क्षमता का एहसास करने के लिए स्वतंत्र हों, जबकि समग्र रूप से समाज के कल्याण और सामंजस्य के प्रति प्रतिबद्ध रहें।

## सन्दर्भ सूची :

1. अप्पादोरई, ए. (1971). बीसवीं सदी में भारतीय राजनीतिक सोच, नौरोजी से नेहरू तक एक शुरुआती सर्वे, पृष्ठ संख्या 90 .

2. चक्रवर्ती, बी., और पांडे, आर. के. (2023). मॉडर्न भारतीय राजनीतिक विचाररू टेक्स्ट और संदर्भ। रूटलेज इंडिया, पृष्ठ संख्या 12 .

3. फुच्स, सी. (2019). एमएन रॉय और फ्रैंकफर्ट स्कूलः सोशलिस्ट ह्यूमनिज्म और कम्युनिकेशन, कल्चर, टेक्नोलॉजी, फासीवाद और राष्ट्रवाद का क्रिटिकल एनालिसिस। ट्रिपलसीरू कम्युनिकेशन, कैपिटलिज्म और क्रिटिक। ओपन एक्सेस जर्नल फॉर ए ग्लोबल सस्टेनेबल इन्फॉर्मेशन सोसाइटी, 17(2), पृष्ठ संख्या 249 .

4. दीनदयाल उपाध्याय. (2014). पॉलिटिकल डायरी. नई दिल्लीः सुरुचि प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 77.

5. मनबेंद्र नाथ रॉय. (1947). न्यू ह्यूमनिज्मः एक मैनिफेस्टो. कलकत्ताः रेनेसां पब्लिशर्स, पृष्ठ संख्या 31 .

6. एंडरसन, डब्ल्यू. के. (1975). जनसंघः पार्टी के व्यवहार में विचारधारा और संगठन (डॉक्टरल शोध प्रबंध, द यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो), पृष्ठ संख्या 70 .

7. चटर्जी, पी. (2020). देश और उसके टुकड़ेः कॉलोनियल और पोस्ट–कॉलोनियल इतिहास, पृष्ठ संख्या 10

8. दीनदयाल उपाध्याय. (1965). इंटीग्रल ह्यूमनिज्म. नई दिल्लीः भारतीय जनसंघ, पृष्ठ संख्या 54 .